ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-6* July- 2021
Innovation The Research Concept

भारत में न्यायिक सुधारों की जरूरत

Need for Judicial Reforms in India

Paper Submission: 10/07/2021, Date of Acceptance: 23/07/2021, Date of Publication: 24/07/2021

हेमेन्द्र सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर,
राजनीति विज्ञान विभाग
रा0स्व0ग्रा0उ0पी0जी0 कालेज, पुखरायां,
कानपुर देहात,
उत्तर प्रदेश, भारत

Abstract सारांश

भारतीय संविधान में न्यायपालिका की स्वतंत्र अप्रभावित निष्पक्ष दबाव मुक्त कार्यशैली सुनिश्चित की गई है लोकतंत्र के तीसरे स्तंभ के रूप में संविधान की रक्षा के साथ-साथ न्यायपालिका नैसर्गिक न्याय की स्थापना में सहायक रही है

दूसरी ओर विगत वर्षों में हमारी न्याय प्रणाली में न्यायाधीशों की कमी मुकदमों का बढ़ता बोझ शिथिलता भ्रष्टाचार जैसी समस्याएं उत्पन्न हुई है।

आधार रूप में ब्रिटिश न्यायिक ढांचे में संरचनात्मक बदलाव कीहै जिससे न्यायपालिका को देश काल के अनुरूप अधिक गतिशील जवाब देह बनाया जा सके

The Indian Constitution has ensured the independent, unaffected, unbiased, pressure-free working style of the judiciary, as the third pillar of democracy, along with protecting the constitution, the judiciary has been instrumental in establishing natural justice.

On the other hand, in the last years, problems like shortage of judges in our judicial system, increasing burden of cases, laxity, corruption have arisen.

Structural changes have been made to the British judicial structure as a basis, to make the judiciary more dynamic and accountable to the times of the country.

मुख्य शब्दः अल्टरनेटिव ग्रीवेंस एड्रेसल सिस्टम, सिविलियन जूरी, सर्किट न्यायालय मेमोरेंडम ऑफ प्रोसीजर, राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (नालसा), न्यायिक वीटो। Alternative Grievance Redressal System, Civilian juries, Circuit Court, Memorandum of Procedure, National Legal Services Authority, Judicial Veto.

प्रस्तावना

किसी भी जीवंत और गतिशील लोकतंत्र की यह अनिवार्य शर्त है कि उसमें एक स्वतंत्र निष्पक्ष प्रभावी एवं जवाबदेह न्यायिक प्रणाली हो।

भारतीय संविधान में सरकार के तीनों अंगो विधायिका और न्यायपालिका का स्वतंत्र अस्तित्व और उनकी स्वतंत्र कार्य शैली है, संविधान इनके बीच पृथक्करण के एक विशेष अर्न्तसम्बन्धों को रेखांकित करता है।

संविधान की रक्षा का दायित्व एवं अंतिम निर्वाचन का अधिकार सर्वोच्च न्यायालय को है। सर्वोच्च न्यायालय के साथ-साथ राज्यों में उच्च न्यायालय तथा अधीनस्थ न्यायालयों को भी विधि के शासन की स्थापना, विवादों का निपटारा करने तथा व्यक्ति के बुनियादी अधिकारों की रक्षा का दायित्व प्रदान किया गया है। भारतीय न्यायपालिका ने लोकतांत्रिक समेकन के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है [1]

आजादी के बाद शुरूआती वर्षो में अपने ऐतिहासिक निर्णयों से सर्वोच्च न्यायालय ने राजनीतिक प्रणाली को स्थायित्व प्रदान किया वहीं बाद में न्यायिक सक्रियता एवं जनहित के फैसलों से सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय को स्थापित करने का प्रयास किया है। अल्लादि कृष्ण अय्यर के शब्दों में " यह वह महान न्याय स्थल है जो आजादी और सामाजिक नियंत्रण की सीमा रेखा खींचता है[2] न्याय पालिका ने जनतंत्र को दूषित होने सेबचाया है तथा गुड गवर्नेंस में मदद की है।

लेकिन दूसरी ओर, देखा जाय तो हमारा न्यायिक ढांचा ब्रिटिशकालीन है, हम अपनी आवश्कताओ और अपने देश की प्रकृति एवं परिवेश के अनुरूप इसमें परिवर्तन नही कर पाये हैं। प्रक्रियात्मक कानूनों को आधुनिक युग की जरूरतों के मुताबिक बदला नहीं जा सका है जिससे न्यायपालिका कई स्तरों पर जूझ रही है, इसकी निष्पादन क्षमता प्रभावित हो रही है। न्यायालयों में मुकदमों का बढ़ता बोझ, भ्रष्टाचार, खर्चीली न्याय व्यवस्था, न्याय में विलम्ब और शिथिलता व्याप्त हो गयी है। न्यायाधीशो की नियुक्ति प्रक्रिया पर विवाद के चलते न्यायाधीशों की संख्या में कमी, अधीनस्थ न्यायालयों में ढांचागत सुविधाओं का घोर अभाव जैसी समस्याएं हैं। दूसरी ओर न्यायपालिका को, भूमिका के स्तर पर अतिसक्रिय होने के कारण कार्यपालिका एवं विधायिका के कार्यक्षेत्र में हस्तक्षेप तथा संवैधानिक सीमांए लांघने के आरोपो से दो चार होना पड़ रहा है।

अध्ययन का उद्देश्य

जनता आज भी न्यायपालिका को अँतिम उम्मीद के रुप मे देखती है । ऐसे में न्याय प्रणाली में संरचात्मक बदलाव एंव सुधार, इसकी दक्षता एंव पारदर्शिता के लिए जरूरी हो गये हैं इसे अधिक गतिशील एवं जवाबदेह बनाने की जरूरत है।

भारतीय न्यायप्रणाली में जिस तरह मुकदमों की संख्या बढ़ी है वह किसी भी इन्फ्रास्ट्रक्चर को बौना बना सकती है। वर्ष 2010 के एक सर्वेक्षण में यह कहा गया की सर्वोच्च न्यायालय में 54864, देश के उच्चन्यायालयों में 4060709 तथा जिला एवं अधीनस्थ न्यायालयों में 27275953 मुकदमें लम्बित हैं आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के न्यायाधीश बी0बी0राव का यह कथन न्यायिक निर्णयों में विलम्ब की भयानक तस्वीर प्रस्तुत करता है जिसमें उन्होने कहा था कि भारतीय न्यायपालिका को मुकदमों का ढेर साफ करनें में लगभग 320 वर्ष लगेंगे।[3]

2017 में विधि मंत्रालय की ओर से लम्बित मुकदमों के पेश आकड़ो में जहां सर्वोच्च न्यायालय तथ उच्च न्यायालयों में लम्बित मुकदमों में कुछ कमी आयी तो निचली अदालतों में लम्बित मुकदमें और बढ़ गये। आंकड़ो के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय में अभी भी 58 हजार मुकदमें, उच्च न्यायालयों में 40 लांख से अधिक मुकदमें तथा निचली अदालतों में 2.74 करोड़ मुकदमे लम्बित हैं अर्थात देश में कुल लम्बित मुकदमें 3 करोंड़ से अधिक हैं।[4]

मुकदमों के ढेर से निजात दिलाने के लिए केन्द्र सरकार ने विगत वर्षो में राष्ट्रीय मुकदमा नीति बनाने की बात की थी। इस नीति में लम्बित मुकदमों की औसत अवधि 15 वर्ष से कम करके 3 वर्ष करना, अदालती समय का दुरूपयोग रोकने के लिए सभी अदालतों में कोर्ट प्रबन्धकों की नियुक्ति आदि करने की योजना थी पर इसमें प्रगति नहीं हुई।

एटार्नी जनरल मुकुल रोहतगी का कहना है कि हाईकोर्ट में ऐसे जज हैं जो पूरे जीवन काल में 100 मुकदमे भी नहीं निपटा पाये फिर भी सुप्रीमकोर्ट मे न्यायाधीश बनाये गये और हजारों मुकदमे निपटाने वाले हाईकोर्ट में ही रह गये। डॉ0 उदितराज कहते हैं कि कई ऐसे जज हैं जो 11 से 12 बजे या 3 से 4 बजे तक ही बैठते हैं[5]

ऐसे में मुकदमों की संख्या बढ़नी स्वाभाविक है। सर्वोच्य न्यायालय ने अपने कई आदेशो में न्यायप्रणाली को दुरूस्त करने के लिए निचली अदालतों को सलाह दी है कि भ्रष्टाचार, दहेज मौत, घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न और साइबर अपराध जैसे मामलों में केस त्वरित गति से चलाया जाए और अधिकतम 3 वर्ष के भीतर फैसला आ जाए।

देश में वैकल्पिक षिकायत प्रणाली (अल्टरनेटिव ग्रीवांस रिड्रेसल सिस्टम) को मजबूत किये जाने की जरूरत है ताकि लोग छोटे-छोटे विवादों को लेकर सीधे अदालत में न पहुंचे। पंचायत आर्बिट्रेशन आदि के माध्यम से मामलों की स्क्रूटनी की जा सकती है।

भारत में 60 से 70 प्रतिशत मामले ग्रामीण भारत से आते हैं ऐसे में ग्राम न्यायालय village court या लोक अदालत के माध्यम से मामले निपटाकर मुकदमें कम किये जा सकते हैं इसी तरह फैमिली कोर्ट है, इन्हे अधिक सक्रिय किया जाए तथा लोगो को इसके प्रति जागरूक किया जाय। लॉ कमीशनने उपरोक्त ढांचों को मजबूत करने की सलाह दी थी। दिल्ली उच्च न्यायालय में मीडिएशन सेंटर बनाया गया है जहां वकीलों की सहायता से मामलों में सुलह करायी जाती है। अमेरिका जैसे देशोंमे सिविलियन जूरी के उदाहरण हैं, न्यायाधीश जूरी की सलाह को अपने निर्णयों में शामिल करते हैं। भारत में के0एम0नानावती केस (1959) में अंतिमबार जूरी का प्रयोग हुआ था बाद में यह परम्परा खत्म हो गयी। मामलों को जल्दी निपटाने में जूरी मदद कर सकती है। इसके अलावा न्याय तंत्र को आधुनिक तकनीकी सुविधाओं से लैसकर एक तरह के मुकदमों को समायोजित कर उनकी तादात बढने से रोकना चाहिए।

देर से मिला न्याय, न्याय न मिलने के समान है। अदालतों में मुकदमों की बढ़ती संख्या का एक कारण त्वरित न्यायप्रणाली का न होना है। समय से न्याय न मिल पाने के कारण सामाजिक असंतोष, उत्पीड़न तथा भ्रष्टाचार के मामलों में वृद्धि होती है। sc/st कानून, दहेज उत्पीड़न, आर्म्सएक्ट एवं दुष्कर्म के फर्जी मामलों में परेशान आम जनता को इतनी जल्दी राहत नहीं मिल पाती, बहुत देरी होती है।

हमारे देश में, मामलों के त्वरित निपटारे में एक सबसे बड़ी बाधा अदालतों की कम संख्या है।देशकी 90प्रतिशत आबादी के लिए जिला न्यायालय ही महत्वपूर्ण हैं। गरीब, उच्चन्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय तक पहुंच ही नही पाते अतः अधीनस्थ न्यायालयों की संख्या बढ़ानी बेहद जरूरी हैं। निचली अदालतों में, मामलों के शीघ्र निपटारे के लिए वहां न्यायिक ढांचे को सुधारने की जरूरत है।

केन्द्र सरकार ने निचली अदालतों में मुकदमों के शीघ्र निपटारे के लिए वर्ष 2000 में राज्यों मे 1734 त्वरित अदालतों के गठन की मंजूरी दी, आर्थिक मदद भी दी गयी लेकिन बाद में मदद बंद होने के कारण राज्यों ने उनकी संख्या भी कम कर दी, लगभग 500 अदालतें ही कार्यरत हैं।

इसी तरह सरकार ने 2009 में 71 अतिरिक्त विशेष अदालतें गठित करने का निर्णय लिया पर विशेष अदालतों में मुकदमों की कार्यवाही के लिए न तो पर्याप्त संख्या में स्टॉफ है न ही विशेष लोक अभियोजक।

2017 में सांसदों और विधायकों के खिलाफ जारी मुकदमों की जल्द सुनवाई के लिए सर्वोच्य न्यायालय ने विशेष अदालतों के गठन का आदेश दिया। इनके खिलाफ सुनवाई को 1 वर्ष के भीतर पूरा करने का आदेश दिया तथा यह व्यवस्था की, कि यदि निचली अदालत एक वर्ष के भीतर सुनवाई नहीं करती हैं तो उसे उच्चन्यायालय के मुख्यन्यायाधीश को लिखित रूप में कारण बताना होगा। खण्डपीठ ने यह भी कहा कि शीघ्र सुनवाई के लिए अधिक धन की जरूरत है ताकि ज्यादा अदालतें बन सकें, अधिक जज नियुक्त हों तथा पर्याप्त बुनियादी ढांचा हो ।

महिलाओं के प्रति बढ़ते अपराध को देखते हुए दिल्ली में त्वरित अदालतें बनी हैं, पंजाब में भी ऐसा किया गया है लेकिन दूसरे राज्यों में उदासीनता है।

2013 में CBI की 46 अदालतें कार्यरत थीं पर CBI की विशेष अदालतों के फैसले हाईकोर्ट में जाकर लटकजाते हैं। चारा घोटाला एंव 2G स्पेक्ट्रम के मामले उदाहरण हैं। फास्ट ट्रैक ट्रैक अदालतें भी केवल महत्वपूर्ण मामले ही निपटाती हैं।

सर्वोच्य न्यायालय के एक निर्देश के अनुसार तीन महीने से ज्यादा कोई आर्डर रिजर्व नहीं रखा जाना चाहिए लेकिन इसके बावजूद तमाम मामलों में सालोंसाल आदेश पारित हो रहे हैं। वाणिज्य विवादों के शीघ्र निपटारे के लिए फास्ट ट्रैक कोर्ट बनाने की जरूरत है।

न्यायमूर्ति कृष्णअय्यर कहते हैं ' एक ज्यूडिषियल परफॉर्मेंस कमीशन, बने जो न्यायाधीशों के कार्यो का मूल्यांकन करे। न्याय में देरी के लिए पूरी जिम्मेदारी व्यवस्था तथा संसाधनों की कमी को दे दी जाती है। जबकि एक प्युनिटिव कमीशन या दण्ड आयोग बनाकर यह देखा जाना चाहिए कि किन न्यायाधीशों ने फैसले लिखने में देरी की है।

ब्रिटिश न्यायप्रणाली में सर्किट न्यायालय (circuit court) है। ये न्यायालय मुकदमों की सुनवाई एक निश्चित स्थान पर करने के बजाय स्थान-स्थान जाकर सुनते हैं। मामले जल्दी

निपटाने में यह प्रभावी है।

न्याय में देरी के कारण व्यक्ति पूरा जीवन दोषी या अपराधी के रूप में गुजार देता है। बेहद गंभीर मामलों में ही जमानत से इन्कार करना चाहिए क्योंकि कई वर्ष जेल मे रहने के बाद में यदि व्यक्ति निर्दोष साबित होता है उसकी क्षतिपूर्ति किसी भी तरह नहीं की जा सकती ।

अदालतों की कम संख्या के अतिरिक्त भारतीय न्यायप्रणाली जिस समस्या से जूझ रही है, वह न्यायाधीशों की अपर्याप्त संख्या है। यह मुकदमों के बढ़ते बोझ का कारण भी है।

वर्ष 2014 में कानून मंत्री ने आंकड़ा दिया था किदेशके 24 न्यायालायों के 984 पद स्वीकृत थे, 31 जुलाई 2015 के आकड़ो के अनुसार उच्च न्यायालयों 382 पद रिक्त थे, अधीनस्थ न्यायालयों में न्यायिक अधिकारियों के 197566 पद रिक्त थे। मई 2016 की एक रिपोर्ट के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय में 6 जजों के पद रिक्त थे और 24 उच्च न्यायालयों में 433 रिक्तियां थी जबकि सर्वोच्च न्यायालय में 31 न्यायधीशों की क्षमता तथा उच्चन्यायालयों में संयुक्त क्षमता 1065 न्यायाधीशों की थी[7]
देखा जाए तो हमारी न्यायपालिका मे 2006 में 15 प्रतिशत पद रिक्त थे जो 2015 में 37प्रतिशत हो गये, 2019 में भी यही प्रतिशत रहा यानि चार वर्षो में सुधार नहीं हुआ।

दुनियां के विकसितदेशों में, आस्ट्रेलिया में प्रति 10 लाख की जनंसख्या पर जजों की संख्या 42, कनाडा में 75 ब्रिटेन में 51 और अमेरिका में 107 है। इसके बरक्स हमारे यहां प्रति 10 लाख की जनसंख्या पर केवल 11 न्यायधीश हैं भारत न्यायाधीशों एंव आबादी के बीच सबसे कम अनुपात वालेदेशों में से एक है। विधि आयोग की 120वीं रिपोर्ट में यह कहा गया कि जजों की संख्या बढ़ाना बहुत जरूरी है, कम से कम 50 जजों की नियुक्ति करनी होगी।

न्यायाधीशों की नियुक्ति में सबसे बडी बाधा, नियुक्ति प्रक्रिया को लेकर सरकार एंव सर्वोच्य न्यायालय के बीच खींचतान है।

संविधान में न्यायाधीशों की नियुक्ति, राष्ट्रपति यानि सरकार द्वारा भारत के मुख्य न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालयों के अन्य न्यायाधीशों के सलाह से की जायेंगी, ऐसी व्यवस्था की गयी थी।

1993 एवं 1998 के सर्वोच्च न्यायालय के फैसलों से यह व्यवस्था एक कोलिजियम के हाथ में आ गई जिसमें भारत के मुख्य न्यायाधीश तथा 4 अन्य वरिष्ठ न्यायाधीशों की राय से राष्ट्रपति द्वारा सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के न्यायधीशों की नियुक्ति तय हो गयी। इसी तरह सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय संघ बनाम सांकलचंद मुकदमें मे यह भी स्पष्ट कर दिया था कि एक उच्चन्यायालय के न्यायाधीश का तबादला उसकी सहमति के बिना नहीं हो सकता[8]

बाद के वर्षो में कोलेजियम व्यवस्था की खामियां दिखाई दीं 18वें विधि आयोग ने 2008 में अपनी 214वीं रिपोर्ट में अमेरिका आस्ट्रेलिया, कनाडा आदिदेशों का उदाहरण देते हुए नियुक्ति प्रक्रिया में बदलाव का सुझाव दिया। आयोग का मानना था कि उक्त निर्णयों से नियुक्ति की शक्तियों को लेकर असंतुलन पैदा हो गया है।

नियुक्ति प्रक्रिया में सुधार करने के लिए अप्रैल 2015 में राष्ट्रीय नियुक्ति आयोग के गठन के लिए संसद ने 99वें संविधान संशोधन को पारित किया लेकिन अक्टूबर 2015 में सर्वोच्च न्यायालय ने इस खारिज पर कोलेजियम व्यवस्था को फिर बहाल कर दिया है।

कोलेजियम व्यवस्था में पारदर्शिता की कमी है फिर भी इसके माध्यम से न्यायपालिका नियुक्ति में अपना अधिकार बनायें रखना चाहतीं है वहीं कार्यपालिका, नियुक्ति में अपना निर्णायक अधिकार मानती है। दुनियां के अनेक देशों में कार्यपालिका ही जजों को नियुक्त करती है। भारत में न्यायाधीशों के द्वारा न्यायाधीश की नियुक्ति की सिफारिश करने वाली वर्तमान व्यवस्था पर प्रश्न चिह्न है

सरकार ने इसके लिए " मेमोरेण्डम ऑफ प्रोसीजर" बनाया तो, सर्वोच्च न्यायालय ने उस ड्राफ्ट को भी लौटा दिया। कोलेजियम व्यवस्था पर सुधार हेतु जनता से सुझाव मांगे थे जिस पर बड़ी संख्या में सुझाव आये थे जो 11 हजार पन्नों में है। जन भावनाओं के अनुरूप, व्यवस्था में सुधार हेतु न्यायिक आदेश पारित कर सर्वोच्च न्यायालय को अपना संवैधानिक दायित्व को पूरा करना चाहिए[9]

एन0जे0ए0सी0 पर सर्वोच्च न्यायालय में बहस के दौरान दिये गये आंकड़ो के अनुसारदेशके 13 उच्च न्यायालयों में 52 प्रतिशत या करीब 99 जज बड़े वकीलों, जजों के रिश्तेदार हैं। आरोपों के अनुसार जजों की नियुक्ति प्रणाली में 200 अभिजात्य रसूखदार परिवारों का वर्चस्व है। कोलिजियम व्यवस्था पर स्वयं सर्वोच्च न्यायालय के जज कुरियन जोसफ ने प्रश्न उठायें ऐसे में इसकी न्यायिक निष्पक्षता पर प्रश्न उठता हैं।

सर्वोच्च न्यायालय ने NJAC को, बिना यह स्पष्ट किये कि यह किस तरह संविधान के विरूद्ध है इसे रद्द कर दिया संविधान विषेषज्ञ सुभाष कश्यप प्रश्न उठाते हैं कि क्या यह संविधान की भावना के विरूद्ध नहीं है

अमेरिका में न्यायाधीशों की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा होती है जिसे विधायिका (सीनेट के माध्यम से) पुष्ट करती है। ब्रिटेन में भी नियुक्ति के लिए आयोग है।

कोलेजियम में बैठे दोयम दर्जे के लोगों से पहले दर्जे के चयन की उम्मीद कैसे की जा सकती है यदि गलत जज की नियुक्ति हुई हो तो नियुक्ति करने वाले कोलेजियम के सदस्यों की जवाब देही भी तय होनी चाहिए। वे नेताओं की तरह सत्ता के केन्द्रो के साथ अपने सम्बन्धों का हलफनामा दें जिससे नियुक्ति पारदर्शी हो 10

कोलेजियम पद्धति द्वारा न्यायाधीशों की अनुशंसा करने में कोई विवरण, मिनट नही रखा जाता अनुषंसा के पक्ष विपक्ष में कही गयी बातों का कोई रिकार्ड नहीं रहता 11 जस्टिस कृष्ण अय्यर ने इस व्यवस्था को "व्याभचारी" कहा 12 इसी तरह कोलेजियम में दलितों या महिलाओं के प्रतिनिधित्व पर कमीं गौर नहीं किया गया इन कमियों के चलते इसे फूलप्रूफ व्यवस्था कैसे मानी जा सकती है। भारतीय न्यायिक सेवा आयोजित कराने का प्रावधान अभी तक गंभीरता से विचार नहीं किया गया।जिन उच्च न्यायालयों में जजो के बच्चे या रिश्तेदार वकालत कर रहे हो उन्हे अपना तबादला करा लेना चाहिए।

सरकार एवं न्यायपालिका दोनो ही संविधान से बंधे हैं। कोलेजियम की सिफारिश के बाद अंतिम निर्णय के पूर्व न्यायिक, प्रशासनिक, संवैधानिक और राजनीतिक क्षेत्र के विशेषज्ञों के एक स्वतंत्र सदस्य मण्डल द्वारा पुनर्विचार का प्रावधान महत्वपूर्ण हो सकता था।

न्यायपालिका में कथित भ्रष्टाचार तथा न्यायाधीशों की कार्यप्रणाली को लेकर प्रकरण सामने आये हैं। तीन दषकपूर्व ही पूर्व-मुख्यन्यायाधीश पी0एन0 भगवती ने न्यायपालिका मेंभ्रष्टाचार के संकेत दिये थे। सेवानिवृत्त मुख्य न्यायधीश एस0पी0भरूचा ने भी न्यायपालिका में 15 प्रतिशत भ्रष्टाचार को स्वीकार किया था। पहले न्यायपालिका अपने यहां भ्रष्टाचार को पूरी तरह नकारती थी बाद में निचली अदालतों में इसका होना स्वीकार किया अब प्रश्न

ऊपरी ढांचे पर भी लगाये जाने लगे हैं। ट्रांसपेरेन्सी इण्टरनेशनल जैसे संस्था ने लोगो के बीच एक सर्वे के माध्यम से भारतीय न्यायप्रणाली में भ्रष्टाचार व्याप्त होने की रिपोर्ट दी थी। सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीशों सव्यसाची मुखर्जी, जस्टिस काटजू, जस्टिस रूमा पाल आदि ने भी न्यायपालिका की अंदरूनी गिरावट पर प्रश्न उठाये हैं। 1991 में जस्टिस रामास्वामी पर लगे भ्रष्टाचार के आरोप में महाभियोग प्रस्ताव संसद में पारित नही हो सका। 2009 में पी0डी0 दिनाकरन जो तमिलनाडु उच्चन्यायालय के न्यायाधीश थे बाद में कर्नाटक के मुख्य न्यायाधीश रहे, को आयकर के 30 करोड़ के एक मामले में आरोपी का पक्ष लेते पाया गया, उन पर सैकड़ो एकड़ जमीन हड़पने के आरोप लगे, महाभियोग की प्रक्रिया शुरु होने के पूर्व ही उन्होने इस्तीफा दे दिया। इसी तरह कलकत्ता हाईकोर्ट के न्यायाधीश सौ मित्र सेन पर आरोप लगे मामला राज्य सभा में महावियोग के रूप में लाया गया। भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश अल्तमश कबीर पर उनकी बहन के कलकत्ता हाईकोर्ट में नियुक्ति पर गुजरात हाईकोर्ट के मुख्य न्यायाधीश भास्कर भट्टाचार्य ने आरोप लगाये तथा राष्ट्रपति, मुख्य न्यायाधीश तथा प्रधान मंत्री को पत्र लिखा । उन पर, कॉमन मेडिकल टेस्ट काउन्सिल से सम्बधित उनके जजमेण्ट के पूर्व ही वेबसाइट पर फैसले की जानकारी सार्वजनिक होने के कारण प्रश्न खड़े किये गये। उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय के किसी किसी जस्टिस के खिलाफ FIR सम्बन्धित न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की पूर्व अनुमति के बगैर दर्ज नहीं की जा सकती। इस विवाद ने जजों से खिलाफ विवाद निपटानें के लिए एक संस्थानिक व्यवस्था की जरूरत पर जोर दिया, न्यायिक जवाबदेही न्यायपालिका की आजादी की पूर्व शर्त हैं[13]

ब्रिटेन में न्यायिक नियुक्ति प्रक्रिया तथा न्यायिक आचरण या अनुशासन सम्बन्धी शिकायतों पर विचार करने एंव दूर करने के लिए ओम्बुड्समैन की स्थापना की गयी है। वह नियुक्ति आयोग को कार्यवाही की अनुशंसा करता है।

12 जनवरी 2018 को सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा के कामकाज शैली पर चार न्यायाधीशों जस्टिस चेलमेश्कर, जस्टिस मदन लोकुर, कुरियन जोसेफ तथा रंजन गोगोई ने अपनी नाराजगी जतायी। न्यायापालिका के इतिहास में ऐसा पहली बार हुआ जब प्रेसकांफ्रेंस बुलाकर सवाल उठायें गये। मुख्य न्यायाधीश पर रोस्टर के विषय में, सर्वोच्च न्यायालय में महत्वपूर्ण मामले पसंदीदा पीठों को आवंटित करने में अपने पद एवं अधिकारों के दुरूपयोग के आरोप लगाये गये । जस्टिस चेलमेश्कर के नेतृत्व में चीफ जस्टिस पर यह आरोप भी लगाया गया कि उन्होने सोहराबुद्दीन फेक इनकाउण्टर मामले से जुड़े जस्टिस बी0एच0 लोया की मौत की जांच को जूनियर जस्टिस अरूण मिश्रा को सौंपा, जिनके भाजपा नेताओं से नजदीकी सम्बन्ध थे। उल्लेखनीय है कि सोहराबुद्दीन मामले में मुख्य आरोपी के रूप में भाजपा अध्यक्ष अमितशाह का नाम है। एक तरह से संकेत था कि चीफ जस्टिस एक पार्टी की तरफदारी कर रहे हैं आरोपो के चलते जस्टिस अरूण मिश्रा ने स्वयं को केस से अलग कर लिया ।

इसी तरह 2016 में मेमोरेण्डम ऑफ प्रोसीजर पर, 5 जजों की संविधान पीठ द्वारा सुनवाई किये जाने के बाद, मामलें को चीफ जस्टिस ने छोटी ब्रांच को सौंप दिया। वैसे इस पूरे प्रकरण मे देखा जाए तो न्यायालय दो आधारों पर चलता है पहला कानूनी , दूसरा विवेक। चारो जजों ने जो सवाल खड़े किये हैं वह विवेक वाले प्रश्न से जुडा है, कानूनी आधार पर तो यह मुख्य न्यायाधीश का अधिकार है, यह जरूर है कि ऐसी व्यवस्था बनाई जा सकती है कि रोस्टर के तहत कौन सा जज किस प्रकार के केस देखे।[14]

इसी तरह, कलकत्ता उच्चन्यायालय के जस्टिस एस0 कर्नल विवादों में रहे, उन्होने सर्वोच्च न्यायालय के 20 भ्रष्ट जजों की लिस्ट, राष्ट्रपति एवं प्रधानमंत्री को भेजी। कर्नल को न्यायालय की अवमानना के आरोप में जेल की सजा सुनाई गयी, प्रत्युत्तर मैं उन्होने सुप्रीम कोर्ट के जजों के खिलाफ ही सश्रम कारावास का आदेश जारी कर दिया। कर्नन मामले पर 7 जजों की संविधान पीठ बनी ,उन्हे आरोप साबित करने या माफी मांगने को कहा गया। जस्टिस कर्नन ने उन सातों जजों पर जातिगत भेदभाव के आरोप भी लगाये। आजादी के बाद पहली बार हाईकोर्ट के किसी जज को जेल की सजा सुनाई गयी। कानून मंत्री ने कहा जब तक न्यायधीशों की नियुक्ति का कार्य , कार्य पालिका कर रही थी तब तक कर्नन जैसे न्यायाधीश नियुक्त नहीं हुए थे।

ऐसे ही मामलों को लेकर यू0पी0ए0 सरकार के समय Judical Standard and Accountability Bill 2010 लाया गया था जिसमें ऐसी समिति के गठन का प्रावधान था जो जजों के खिलाफ आने वाली शिकायतों को दर्ज कर उनकी जांच करती तथा दोषी पाये जाने पर कार्यवाही करती। यह महाभियोग का एक विकल्प था लेकिन 2014 में लोकसभा कार्यकाल खत्म हो जाने के साथ ही यह लैप्स हो गया[15]

अमेरिका में जजों के अनुशासन के लिए न्यायिक आयोग का प्रावधान है जबकि भारत में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा मई 1997 में बनाई गयी स्व आचार संहिता भी काम नही कर रही है।

न्यायाधीश RTI के दायरे में आने को तैयार नहीं हैं, न्यायपालिका 2009 से ही इसके लिए मना करती रही है।

न्यायाधीश अवकाश ग्रहण करने के बाद विविध अधिकरणों, आयोगों, राज्यपाल, लोकायुक्त आदि पदों पर पुर्ननियुक्ति के लिए तैयार हो जाते हैं। भारतीय विधि आयोग ने अपनी रिपोर्ट में यह अपेक्षा की थी कि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश सेवा निवृत्ति के पश्चात सरकारी नियुक्ति की तरफ देखें इस प्रथा को खत्म करने की जरूरत है। इससे वह अपने कार्य में विचार निष्पक्षता नहीं रख सकता 16

भारत में न्यायपालिका में खामी के लिए सिर्फ न्यायालय ही दोषी नहीं है न्यायपालिका के पास इन्फ्रास्ट्रक्चर तथा संसाधनों की घोर कमी है।देशमें न्यायिक सेवा की मद में बजटीय आवंटन, GDP के आधा फीसद से भी कम होता है, उसे वित्तीय अधिकार भी हासिल नहीं है।

न्यायिक सुधारों के कई अन्य पहलू भी हैं। हम आज भी 1860 के आसपास ब्रिटिश लोगों द्वारा बनाये गये कानूनों का सहारा ले रहे हैं। विधि में इतने नियम उपनियम हैं कि कानून जटिलतम हो गये हैं। एक अदालत कोई निर्णय देती है अगली इसके ठीक विपरीत। गलत निर्णय पर न्यायधीश की कोई जवाब देही भी तय नही है।

फौजदारी कानूनों में व्यापक सुधार जरूरी हैं क्योकि ये कानून व्यवस्था से जुडे है। कभी- कभी केस के दौरान प्रोसीक्यूटर बदल दिया जाता है यह कानून को मेनीपुलेट करने के लिए भी होता है। पारदर्शी वप्रभावशाली न्याय सुनिश्चित करने के लिए अपराध प्रणाली में सबूतों को सूची बद्ध करना बेहद जरूरी है सबूतों की ग्रेडिंग प्रणाली से अपराध न्याय प्रणाली सरल एंव प्रभावी बनेगी। अदालती सुनवाइयों मे भारी भरकम दस्तावेजी करण होता है कई बार लापरवाही में चार्जशीट दाखिल की जाती है। इसी के साथ पुलिस रिफार्म भी बेहद जरूरी हैं। क्योकि पुलिस को न्यायालय का दाहिना हाथ भी कहा जाता है। जांच एजेसियों, अभियोजन एजेन्सियों एवं न्याय प्रणाली को मिलकर काम करने की जरूरत है। दुनियां के तमाम देशों में गवाहों की सुरक्षा के लिए सुव्यस्थित तंत्र हैं हमारे क्रिमिनल जस्टिस में गवाहों की सुरक्षा के लिए "सांक्षी सुरक्षा अधिनियम" के प्रवर्तन की जरूरत है। न्याय में देरी होने पर अपराधी छूट जाते हैं बेकसूर फंस जाता है क्योकि गवाह खरीद लिए जाते हैं या तब तब

गवाह की मृत्यु हो जाती है। अपराधिक मामलों में पीड़ित एवं आरोपी दोनो के मौलिक अधिकार हैं पर देखा जाये तो हमारेदेशमें Victim Based न्याय प्रणाली की जरूरत है।

जेलों में 75 प्रतिशत अंडर ट्रायल कैदी हैं। गरीब की जमानत होने पर भी वह रिहा नहीं हो पाता यदि जमानत राशि अधिक है। तो हुस्नआरा खातून बनाम बिहार राज्य मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि निर्धन व्यक्तियों को निःषुल्विधिक सहायता के बिना न्याय को युक्तिसंगत नहीं माना जा सकता[17]

राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण (नालसा) अधि0 1987 के प्रावधानों को और बेहतर एवं मजबूत बनाने की जरूरत है जिससे वंचित वर्गो तक न्याय सुलभ हो सके।

इसी तरह स्वतंत्र पूर्णकालिक न्यायिक शिकायत आयोग बनाया जा सकता है सुप्रीम कोर्ट के वकील राजीव धवन कहते हैं कि न्यायिक सुधार का जो एजेण्डा रखा गया है इसकी नीति समग्र नहीं है। विकसितदेशों मे न्यायपालिका का प्रबंधन विशेषज्ञ करते हैं, न्यायाधीश नहीं । न्यायधीशों का प्राथमिक कार्य न्याय का सम्पादन है नियुक्ति या प्रबन्ध नहीं।[18]

कतिपय तकनीकी सुधारों की भी जरूरत है । आई0टी0 के प्रयोग से अधिक से अधिक मामलों की ई-फाइलिंग की जाए, पेपरलेस फाइलें त्वरित न्याय के लिए जरूरी हैं। सुप्रीम कोर्ट ने 2018 में अपने कार्यवाही के प्रसारण की मंजूरी दी थीं पर अभी तक इसके लिए सिस्टम नहीं बनाया गया है। सूचना संचार तकनीक से कुशलता पूर्वक, न्यायिक डेटाबेस बनाया जा सकता है जिसमें जजों के अलग-अलग प्रदर्षनो का आंकलन हो सके। न्यायिक शिक्षा में शोध तथा अनुसंधान के लिए वित्त की कमी को दूर करने की जरूरत है।

1980 के दशक के बाद जिस तरह न्यायपालिका सक्रिय हुई है उसे न्यायिक सक्रियतावाद के रूप में परिभाशित किया गया है। अमेरिकी पैटर्न "विधि की सम्यक प्रक्रिया" को व्यवहार में प्रयोग करते हुए प्रशासनिक आदेष और विधायी कार्य कलापों की वैधता पर सवाल उठाकर न्यायालय ने अपनी भूमिका का विस्तार कर लिया है, इसी के साथ जनहितवाद के रूप में मुकदमें बाजी की एक नयी श्रेणी विकसित हुई है पूर्व मुख्यन्यायाधीश पी0एन0 भगवती ने Rules of Locus Standi के नियम को सरल किया और न्यायालय के द्वार जनसाहसी नागरिकों (Public Spirited Citizen) के लिए खोल दिये इसी चरण में सुरक्षात्मक अधिकारों का विस्तार हुआ[19]

जनहितवाद के तहत न्याय प्रशासन को सक्षम, त्वरित तथा कम खर्चीला बनाने के प्रयास हुए जिससे जनसाधारण को न्याय प्राप्त हो सके। कॉमन काज जैसे संगठनों ने जनहित के लिए बड़े ऐतिहासिक महत्व के फैसलों मे अपनी भूमिका निभायी।

लेकिन बाद मे "सेंटर फॉर पब्लिक इंटरेस्ट लिटिगेशन" आदि संगठनों ने जैसे जनहित याचिकाओं की बाढ़ सी ला दी है जो न्यायालय के समय को बर्बाद कर रहे हैं तथा मुकदमों की संख्या भी बढ़ रही है। राहुल गांधी की नागरिकता तय करने, कोहिनूर हीरे को भारत लाने , सर्जिकल स्ट्राइक पर और सिंधु जल समझौता को खत्म करने जैसे मामलों को लेकर याचिकायें दाखिल की गयी हैं। सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा 10 सूत्रीय दिशा निर्देश जारी किये गये हैं जिससे इन्हे हतोत्साहित किया जा सके पर अब भी ये बड़ी संख्या में जारी हैं। सरकारों की अक्षमता तथा सक्षम नियामक संस्थाओं के अभाव के चलते लोग बात-बात पर कोर्ट का दरवाजा खटखटातें हैं। आज न्यायालय की अतिसक्रियता की आलोचना की जा रही है। कि जो अधिकार संविधान ने उसे नहीं दिया है वह न्यायपालिका कैसे ग्रहण कर सकती है। 1998 में उ0प्र0 में मुख्यमंत्री चुनने के लिए कम्पोजिट फ्लोर टेस्ट या 2016 में उत्तराखण्ड में राष्ट्रपति शासन के मसले पर न्यायालय द्वारा विधानसभा को दर किनार कर उसकी शक्तियों के अतिक्रमण करने के उदाहरण हैं [20] इसी तरह मूल ढांचे के सिद्धान्त को आधार बनाकर किसी भी कानून या आदेश को निरस्त करना न्यायिक बीटो जैसा है [21]

इतना ही नहीं उपेन्द्र बक्षी तो ऐसे क्षेत्रों का उल्लेख करते है। जहां कोई न्यायधीश संवैधानिक मूल्यों की रक्षा करने के लिए एक नौकरशाह की तरह आदेश-निर्देश जारी कर सकता है।[22]

कहा गया कि सरकार के ठीक से काम न करने पर न्यायिक हस्तक्षेप होता है, इसी विषय पर पूर्व वित्तमंत्री अरूण जेटली ने कहा था कि न्यायपालिका के अपना काम ठीक से न करने की स्थिति में क्या विधायिका या कार्यपालिका उसके काम में दखल दे सकती हैघ् न्यायिक सक्रियता के चलते कोर्ट की अवमानना के मामले भी बढ़ गये हैं जहां तक जनहितवाद के बढ़ने का प्रश्न है तो अमेरिकी सिस्टम की तरह जूरी का सूत्रपात करके सामाजिक सरोकारों के मसलों को जनता के सहयोग से निपटाया जा सकता है।

भारत में ब्रिटिश संसदीय सम्प्रभुता तथा अमेरिकी न्यायिक समीक्षा के सिद्धान्त के बीच संतुलन स्थापित किया गया है। समय-समय पर संसदीय संप्रभुता के एकपक्षीय आग्रह को न्यायिक समीक्षा के माध्यम से संतुलित किया जाता रहा है।23 अतः यह जरूरी है। कि यह संतुलन हमेशा सवैधानिक मूल्यों के आलोक में ही किया जाना चाहिए, शक्तियों के विभाजन के अतिक्रमण के रूप में नहीं। साथ ही यह जरूरी है कि सरकार भी न्यायपालिका की भूमिका को राजनीतिक चश्में या सुविधा असुविधा से न देखे।

निष्कर्ष हमारी अदालतें 19वीं शताब्दी के कानून और बीसवीं सदी की मानसिकता से लैस होकर 21वीं सदी की समस्याओं का समाधान नहीं कर सकती है 24

न्यायिक सुधार का लक्ष्य एक न्याय संगत समाज को सुनिश्चितकरता है, समाज से उठती मांगो और उभरते दबाव के मद्देनजर इसे उचित रूप में संशोधित/सुधारा जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *बसुकी नाथ चौधरी, युवराज कुमार, आज का भारतः राजनीति और समाज ओरियंट ब्लैक स्वॉन 2013 पेज 75*
2. *विपिन चंद्र, मृदुला मुखर्जी, आदित्य मुखर्जी हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली वि0वि0 2009 पेज 82*
3. *A bi- annual Iournal of the up political sc Association dec 2010, july 2011*
4. *दृष्टिकोण मंथन, नई दिल्ली 1-15 नवम्बर 2017*
5. *डॉ0 उदितराज, दैनिक जागरण 31 अगस्त 2015*
6. *राष्ट्रीय सहारा 'हस्तक्षेप' 29 दिसम्बर 2009 पेज2*
7. *'आज' 3 अगस्त 2016*
8. *AIR 1977 sc 2328*
9. *दैनिक जागरण 18 अगस्त 2016*
10. *विराग गुप्ता, दैनिक जागरण 18 जुलाई 2016*
11. *शंकर शरण दैनिक जागरण 15 जुलाई 2017*
12. *तपन विसवालः भारतीय राजव्यवस्था एवं शासन, ओरियंट ब्लैक स्वॉन 2017 पेज 167*
13. *इण्डिया टुडे, 24 जनवरी 2018 पेज 46*
14. *एन0के0त्रिपाठी, अमर उजाला 14 जनवरी 2018*
15. *कादम्बिनीः 1 फरवरी 2018 पेज 2018*
16. *जे0एन0 पाण्डेयः भारत का संविधान' 32वां संस्करण 2000 पेज 417 सेंटल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद*
17. *AIR 1979 SC 1377*
18. *राष्ट्रीय सहारा 'हस्तक्षेप' 29 दिसम्बर 2009 पेज 4*
19. *तपन विस्वालः भारत शासन, संवैधानिक लोकतंत्र और राजनीतिक प्रक्रिया ओरियंट ब्लैक स्वॉन प्रा0लि0 2017 पेज 145-46*
20. *सुधांशु रंजनः हिंदुस्तान 17 मार्च 2017*
21. *डॉ0 ए0के0 वर्माः दैनिक जागरण 14 अक्टूबर 2017*
22. *बक्शी उपेन्द्रः ऑन द शेक ऑफ नाट बीइंग ऐन ऐक्टीविस्ट थॉट्स आन ज्यूडिषियल ऐक्टिविज्म, इण्डियन बारकाउन्सिल भाग-2, 1984 , पेज 259*
23. *बासुकी नाथ चौधरी, युवराज कुमारः आज का भारत, राजनीति और समाज ओरियंट ब्लैक स्वॉन 2013 संस्करण नई दिल्ली पेज 75*
24. *विराग गुप्ताः दैनिक जागरण 18 अगस्त 2016*